कोरी टेन बूम

(1892-1983)

1933 से 1945 तक जर्मनी देश पर नाज़ी पार्टी का नियंत्रण था, जिसके नेता एडोल्फ हिटलर थे. हिटलर के दो मुख्य लक्ष्य थे :

1) सभी यहूदी लोगों को मारना; और

2) पूरी दुनिया पर राज करना.

नाज़ी जर्मनी में, यहूदी लोगों को घेर लिया गया और जानवरों की तरह मालगाड़ी के डिब्बों में भर दिया गया और फिर उन्हें "यातना शिविरों" में भेजा गया - जहां उन्हें अपमानित किया गया, यातना दी गई, भूखा रखा गया, कड़ी मेहनत करने के लिए मजबूर किया गया, फिर उनकी हत्या कर दी गई. हिटलर का मानना था कि जर्मन लोग, या "आर्य" "मास्टर रेस" थे और उन्हें दुनिया पर राज करना चाहिए था. हिटलर का मानना था कि यहूदी, जिप्सी, समलैंगिक, और कई अन्य अल्पसंख्यक मानव नहीं थे - और ऐसे लोगों से दुनिया को "शुद्ध" किया जाना चाहिए था. हिटलर की योजना एक-के-बाद-एक करके अन्य देश पर अधिकार करने और उन्हें शुद्ध करने की थी.

1940 में यह लड़ाई, कोरी टेन बूम के देश हॉलैंड पहुंची. हिटलर ने उसके देश पर आक्रमण किया. कोरी ने अपना पूरा जीवन हॉलैंड के शांतिपूर्ण हार्लेम शहर में में गुजारा था. पर अब वो देख सकती थी कि नाजियों ने अपने टैंकों और मशीनगनों के साथ उसके शहर की सड़कों पर कब्जा कर लिया था. कोरी, खुद यहूदी नहीं थी. उसने देखा कि उसके यहूदी दोस्तों को हर समय अपने कपड़ों पर यहूदी "स्टार ऑफ डेविड" पहनने के लिए मजबूर किया गया था. उसने देखा कि दुकानों की खिड़कियों में "यहूदियों को अंदर आना मना है" के साइन-बोर्ड लगे थे. उसने देखा कि यहूदी घरों की खिड़कियों पर पत्थर फेंके गए थे, क्योंकि उसके गैर-यहूदी पड़ोसी इस ज़ुल्म के खिलाफ बोलने से डर रहे थे. उसने यहूदी लोगों को, नाज़ी सैनिकों द्वारा सड़कों से खदेड़ते हुए देखा, और फिर वे हमेशा के लिए गायब हो गए. कोरी खुद को बहुत असहाय महसूस कर रही थी!

लेकिन कोरी और उसका परिवार सभ्य लोग थे, और उन्होंने यहूदी लोगों की ज्यादा-से-ज्यादा मदद करने की कोशिश की और अंत में अपनी जान भी जोखिम में डाली. उन्होंने अपने घर को यहूदियों के छिपने के एक ठिकाने में बदल दिया ताकि नाज़ी उन्हें यातना शिविरों में न ले जा सकें. कोरी के कमरे में, दीवार में एक छेद को कवर करने वाला एक बुक शेल्फ था, और उस छेद के पीछे एक छिपी हुई कोठरी थी, जहां भगोड़े (मुख्य रूप से यहूदी) छिपे रहते थे जब तक कि कोई उनके दरवाजे पर दस्तक नहीं देता. इस तरीके से कोरी और उसके परिवार ने कई लोगों की जान बचाई. फिर एक रात उनके घर पर नाजियों ने छापा मारा. वे वहां छिपे हुए किसी भी यहूदी को तो नहीं पकड़ पाए. लेकिन अफसोस यह था कि उन्होंने कोरी और उसके परिवार के लोगों को पकड़ लिया. कोरी की मां बच गईं क्योंकि परिवार की गिरफ्तारी से पहले ही वो बीमारी से मर गई थीं. फिर सभी को अलग-अलग जर्मन जेलों और यातना शिविरों में भेज दिया गया. कोरी के पिता की एक शिविर में मृत्यु हो गई, और उसकी बहन बेट्सी की भी मौत हो गई.

सौभाग्य से, कोरी इस अद्भुत कहानी को अपनी पुस्तक, "द हाईडिंग प्लेस" में बताने के लिए जीवित रही. रेवेन्स-ब्रूक यातना शिविर में अपने सबसे अंधेरे क्षणों के दौरान, उसने कभी भी अन्य लोगों से प्यार करना बंद नहीं किया. उसने उन लोगों से भी प्यार किया जो उससे नफरत करते थे और उसे मार डालने की धमकी देते थे. कोरी के अनुसार भाग्य ने उसे जीवित रखा और उसे हार मानने से रोका.

गिनेटा सागन

(1925-2000)
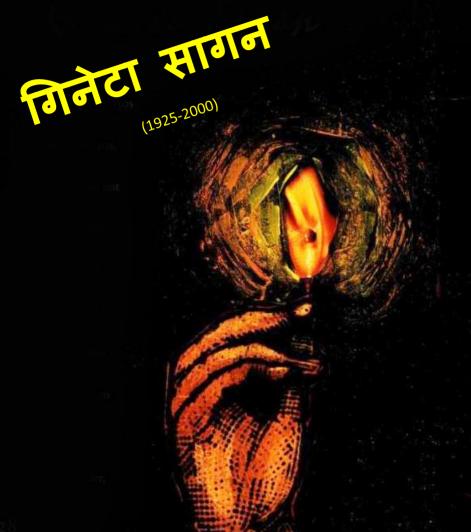
1930 और 40 के दशक की शुरुआत में, हिटलर, यहूदी लोगों की हत्या करने के अपने मिशन में अकेला नहीं था.

इटली के शासक बेनिटो मुसोलिनी की भी यही दुष्ट इच्छा थी. मुसोलिनी, हिटलर का सहयोगी था. मुसोलिनी की "फासिस्ट पार्टी" ने बड़ी संख्या में यहूदी लोगों और गैर-यहूदी लोगों को मार डाला और उन्हें कैद किया. मुसोलिनी का विरोध करने वालों में गिनेटा सागन के माता-पिता भी शामिल थे. जब गिनेटा मोरोनी (उसका मूल नाम) केवल अठारह वर्ष की थी, उसकी माँ, जो एक यहूदी थीं, को एक यातना शिविर में ले जाया गया ... जहाँ उनकी मृत्यु हो गई. उसके पिता को फासीवादी सैनिकों ने, सड़क पर गोली मार दी. वो इतालवी प्रतिरोध के एक जाने-माने सदस्य थे - ऐसे इटालियंस, जिन्होंने यहूदियों को इटली से भागने में मदद करके फासीवादियों के शासन का विरोध किया था.

गिनेटा पहले से ही प्रतिरोध की सदस्य थी जब उसके माता-पिता दोनों को क़त्ल कर दिया गया था. उसकी भूमिका एक ऐसी थी जिसमें बहुत साहस की ज़रुरत थी. हालाँकि वो एक छोटी महिला थी, केवल 4 फीट 11 इंच ऊंची, वो व्यक्तिगत रूप से 500 यहूदियों और फासीवाद-विरोधी को इतालवी सीमा पार स्विट्जरलैंड में ले गई, जहाँ वे सुरक्षित रह सके. वो एक खतरनाक यात्रा थी, और अंत में उसे फासीवादी सैनिकों ने पकड़ लिया और एक अंधेरी कोठरी में फेंक दिया, जहाँ उसे पैंतालीस दिनों तक प्रताड़ित किया गया. उस दौरान, एक जेल गार्ड ने उसकी कोठरी में डबलरोटी के अंदर दबी माचिस फेंक दी. माचिस के अंदर एक अन्य माचिस और एक लिखित नोट रखा था.

माचिस की तीली जलाकर गिनेटा ने वो नोट पढ़ा. उसमें लिखा था, "धीरज रखो! हम तुम्हारी मदद करने की कोशिश कर रहे हैं." फिर कुछ समय बाद, दो "गार्डों" ने नाज़ी होने का नाटक करते हुए उसे जेल की कोठरी से बाहर निकाला - और उसे आज़ाद कर दिया!

मुक्त होने के बाद गिनेटा सागन ने अपना शेष जीवन, दुनिया भर के अन्य लोगों की मदद करने के लिए समर्पित किया - विशेष रूप से यातना और अनुचित कारावास के शिकार लोगों का. वो बिना डरे, अक्सर अलग-अलग भेष बनाकर और नकली पहचान के साथ उन देशों में घुस जाती थी जहां के लोगों को गलत तरीके से जेल में डाला गया था. अमेरिका में, जहां वो बस गई थी, गिनेटा ने "एमनेस्टी इंटरनेशनल" नामक एक संगठन बनाने में मदद की. "एमनेस्टी" का अर्थ है स्वतंत्रता, और "एमनेस्टी इंटरनेशनल" उन लोगों को बचाने के लिए प्रतिबद्ध था जिनकी स्वतंत्रता छीन ली गई थी. गिनेटा ने अमेरिका का पहला "एमनेस्टी इंटरनेशनल" न्यूज़लेटर शुरू किया, जिसका नाम "मैचबॉक्स" था और उसका वो नाम, गिनेटा द्वारा माचिस प्राप्त करने के सम्मान में दिया गया था. गिनेटा का लक्ष्य गलत तरीके से जेल में बंद लोगों को वही आशा देनी थी जो उसे खुद एक बार मिली थी - उसने पत्र लिखकर, कैदियों के पास जाकर, और उनके जेलरों पर उन्हें रिहा करने या कम-से-कम उनके साथ मानवीय व्यवहार करने के लिए दबाव बनाया. "एमनेस्टी इंटरनेशनल" का प्रतीक - कांटेदार तार में लिपटी एक मोमबत्ती को - हालांकि गिनेटा ने नहीं बनाया था, पर वो निश्चित रूप से गिनेटा के स्वयं के व्यक्तिगत प्रतीकों को उजागर करता था: जैसा कि बाद में हुआ, गिनेटा ने कांटेदार तार का एक टुकड़ा उस बाड़ से काटा जो कभी इटली और स्विट्ज़रलैंड को विभाजित करती थी. गिनेटा सागन की आत्मा उस मोमबत्ती की तरह थी जिसे कोई कभी बुझा नहीं सकता था.

अब्दुल गफ्फार खान

(1890-1988)

हमारी आधुनिक दुनिया में, इस्लामी लोग शांतिपूर्ण होने के लिए प्रसिद्ध नहीं हैं. समाचारों में, इस्लामी आतंकवादियों और इस्लामी "पवित्र युद्ध" (होली-वॉर) के बारे में तमाम ख़बरें छपती है. इस्लामी नेताओं को अक्सर अपने लोगों को यहूदियों और "क्रूसेडर" (ईसाईयों) के खिलाफ हिंसा करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए दिखाया जाता है.
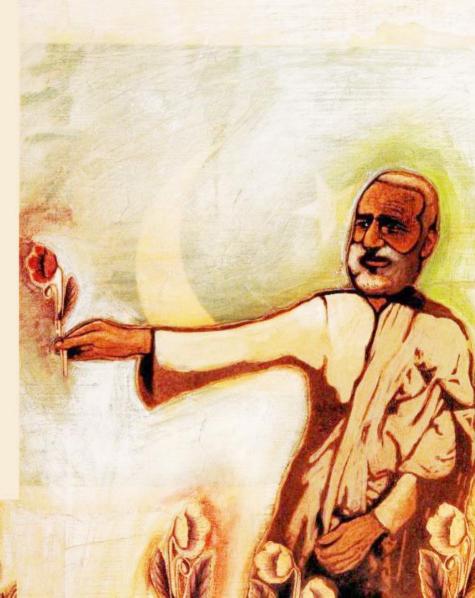
और फिर भी, हमें यह याद रखना बेहद महत्वपूर्ण है कि सभी इस्लामी लोग हिंसक नहीं होते - यह बात सरासर गलत है. वास्तव में, आधुनिक काल के सबसे शांतिपूर्ण नेताओं में से एक इस्लामी नेता थे: अब्दुल गफ्फार खान. खान एक गहरे धार्मिक व्यक्ति थे, और उनकी इस्लामी मान्यताओं ने ही, जीवन भर उनका मार्गदर्शन किया. उनका मानना था कि इस्लाम शांति का धर्म था. हालाँकि, इस विश्वास ने उन्हें न्याय के लिए लड़ने से कभी नहीं रोका. खान ने अपने लोगों, पश्तूनों की मदद करने के लिए अपना जीवन समर्पित किया. पश्तून एक प्राचीन जाति है जो अब पाकिस्तान और अफगानिस्तान में रहती है. वे भी इस्लाम धर्म को मानते हैं. सदियों से पश्तूनों को, अधिक शक्तिशाली समूहों और राष्ट्रों ने धकेला था - विशेष रूप से, ग्रेट ब्रिटेन ने. इतिहास में ग्रेट ब्रिटेन ने न केवल भारत, बल्कि पाकिस्तान को भी जीता था और नियंत्रित किया था.

इस्लाम से प्रेरित होकर, खान ने ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के खिलाफ पश्तूनों के अधिकारों की रक्षा के लिए एक अहिंसक समूह का गठन किया. उन्हें "खुदाई खिग्मतगार" कहा जाता था. इसका अर्थ था "भगवान के सेवक." चूँकि यह समूह ईश्वर को शांतिपूर्ण मानता था, इसलिए वे खुद केवल शांतिपूर्ण प्रदर्शन करते थे.

1930 में एक प्रदर्शन में, उनका सामना सैनिकों की एक पलटन से हुआ, जिनके पास बंदूकें थीं. भागने या सैनिकों से लड़ने की बजाय, ये खितमतगार प्रदर्शनकारी, व्यवस्थित लाइन में सैनिकों की ओर धीरे-धीरे और शांति से बढ़ते रहे. सैनिकों ने प्रदर्शनकारियों पर तब तक गोलियां चलाईं जब तक कि वे और शूटिंग नहीं कर सकते थे. खान की महिला अनुयायी कभी-कभी अपने हाथ पकड़कर सड़क पर लेट जाती थीं. इस तरह के प्रदर्शनों से पुलिस को बहुत गुस्सा आता था. फिर पुलिस ने खान सहित अन्य शांतिपूर्ण सत्याग्रहियों में से कई को गिरफ्तार किया प्रताड़ित किया और मार डाला. खान ने अपनी ज़िंदगी के तीस साल जेल में बिताये और एक बार वो पूरे पंद्रह साल की अवधि के लिए कैद में रहे.

सोजॉर्नर ट्रुथ की तरह, गफ्फार खान ने शांति और न्याय के अपने दोहरे संदेश का प्रसार करते हुए, एक शहर से दूसरे शहर तक पैदल यात्रा की. क्योंकि उन्होंने मुख्य रूप से पैदल यात्रा की, इसलिए वो शायद ही कभी पाकिस्तान के बाहर गए. शायद यह एक कारण हो सकता है कि वो अपने हिंदू मित्र और समकक्ष, गांधी जितने प्रसिद्ध नहीं हुए. गांधी ने पूरी दुनिया की यात्रा की. अक्सर "फ्रंटियर गांधी" कहे जाने वाले अब्दुल गफ्फार खान इससे कहीं अधिक थे. अब्दुल गफ्फार खान शायद हाल के इतिहास में इस बात का सबसे बड़ा सबूत हैं कि इस्लाम शांति को बढ़ावा दे सकता है.

ऑस्कर रोमेरो

(1917-1980)

इस्लाम की तरह ही कैथोलिक धर्म भी ऐतिहासिक रूप से हमेशा शांति से जुड़ा नहीं रहा है - विशेष रूप से धर्मयुद्ध (क्रुसडेस) के मामले में, कैथोलिक चर्च द्वारा शुरू किए गए सैन्य अभियानों का सदियों लम्बा इतिहास रहा है. यह भी कहा जाता है, कि कुछ उत्कृष्ट कैथोलिक, शांति के नायक रहे हैं, खासकर आधुनिक समय में. ऑस्कर रोमेरो एक ऐसे ही एक हीरो थे.
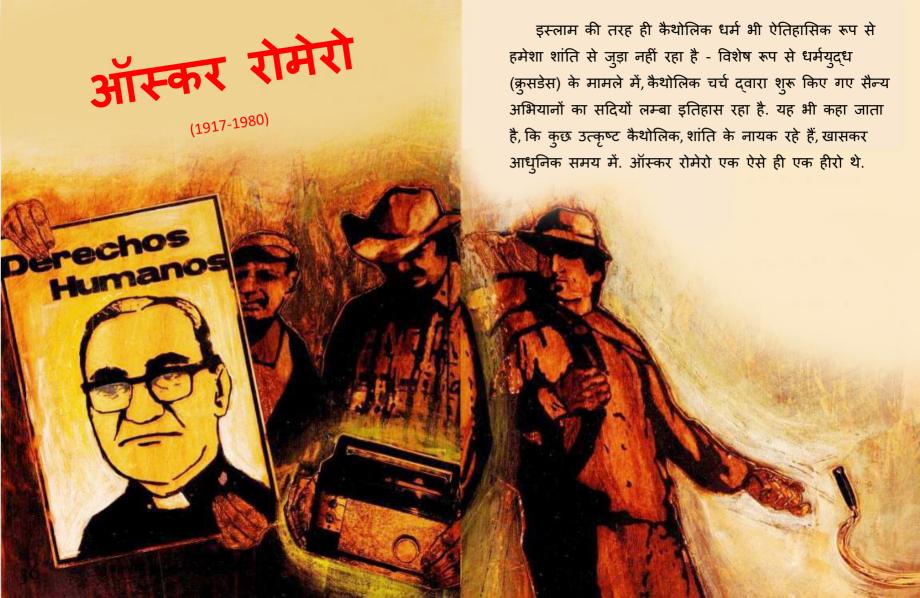
ऑस्कर रोमेरो, अल-सल्वाडोर के कैथोलिक चर्चों के आर्कबिशप थे. अल-सल्वाडोर एक सैन्य सरकार और कुछ अमीर लोगों द्वारा नियंत्रित एक बहुत ही गरीब लैटिन अमेरिकी देश है. हालाँकि अब वहां लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई सरकार है, फिर भी कुछ अमीर लोग ने अभी भी अधिकांश धन हथिया लिया है, जिससे देश का अधिकांश हिस्सा बहुत गरीब है. 1977-1980 में आर्कबिशप के रूप में, रोमेरो के समय के दौरान, सैन्य सरकार ने देश के गरीब लोगों को जीवन को बहुत कठिन बना दिया. उस समय, कम वेतन वाले हड़ताली श्रमिकों को कुछ भी गलत करने पर अक्सर गिरफ्तार किया जाता था और/या बिना किसी परीक्षण (ट्रायल) के, बिना किसी सबूत के, क़त्ल कर दिया जाता था. मूल रूप से, आर्कबिशप रोमेरो का मानना था कि एक धार्मिक नेता के रूप में, इस तरह की राजनीतिक समस्याओं में शामिल होना उनका काम नहीं था. लेकिन फिर कुछ ऐसा हुआ कि उन्होंने अपना मन बदला. उनके एक पुजारी (प्रीस्ट) की साल्वाडोरियन पुलिस ने हत्या कर दी. वो पुजारी, अल-सल्वाडोर के गरीब खेत मजदूरों को संगठित करने और बेहतर मजदूरी की मांग करने का आग्रह कर रहे थे. इस हत्या के बाद रोमेरो को पुजारी (प्रीस्ट) का मृत शरीर देखने के लिए बुलाया गया. सरकार इसे एक चेतावनी के रूप में दिखा रही थी. सरकार यह दिखाना चाहती थी कि वो हर उस व्यक्ति को ठिकाने लगाएगी जो राजनीति में दखल देगा और उसका उस पुजारी (प्रीस्ट) जैसा ही हश्र होगा. उस समय, रोमेरो में एक बहुत बड़ा परिवर्तन आया.

उन्होंने अपने चर्च को छोड़कर, अल-सल्वाडोर में बाकी सभी चर्चों को बंद करके पुलिस द्वारा की गई हत्या का विरोध करने का फैसला किया. अगले रविवार को, उन्होंने मारे गए पुजारी के सम्मान में एक सामूहिक आयोजन किया जिसमें हजारों लोग शामिल हुए.

उस घटना के बाद से रोमेरो ने अपने देश में अन्याय से लड़ने के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया. उन्होंने अपनी सरकार की निंदा करते हुए रेडियो पर कड़े उपदेश दिए. उन्होंने अमेरिका से अल-सल्वाडोर की सरकार को, पैसा देना बंद करने को कहा. उसने परमेश्वर के नाम पर सल्वाडोर की सेना को आदेश दिया कि वो अपने ही लोगों और देशवासियों को मारना बंद करें. यीशु के उदाहरण के बाद, रोमेरो अहिंसा को, हिंसा की एकमात्र प्रतिक्रिया मानते थे.

आर्कबिशप ऑस्कर रोमेरो ने, कैथोलिक चर्च की क्षमता को शांति और न्याय के एक प्रकाशस्तंभ के रूप में समझा - और उन्होंने इस समझ को कार्रवाई में बदला.

पॉल रुसेसाबागिना

(1954-)

प्रश्न: आप क्या करेंगे जब आपके सामने कुछ भयानक हो रहा हो, और उस आतंक को रोकने के लिए आसपास कोई हीरो नहीं हो?

उत्तर: तब आप खुद एक हीरो बन जायेंगे - अगर आपका नाम पॉल रुसेबागिना हो तो.
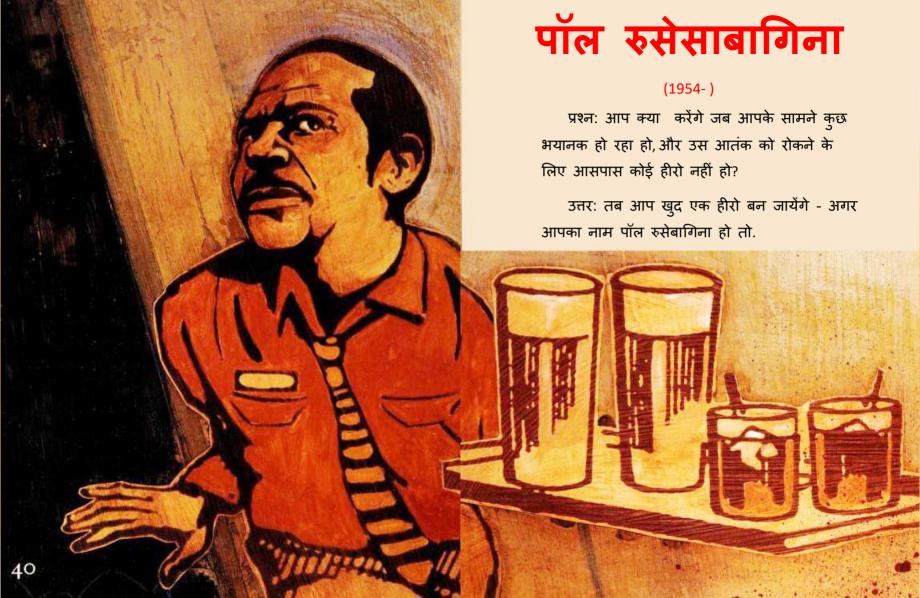
पॉल रुसेसाबागिना अफ्रीकी देश रवांडा में एक होटल मैनेजर थे. 1994 के वसंत तक वो सिर्फ एक औसत आदमी थे, जिन्होंने एक सामान्य जीवन व्यतीत किया था. लेकिन उस वसंत ऋतु में उनका शांतिपूर्ण जीवन अचानक बदल गया. 6 अप्रैल को कुछ भयानक हुआ, कुछ इतना भयानक हुआ कि उसे समझाना मुश्किल था. रवांडा में बहुसंख्यक जातीय लोग, हुतस, अल्पसंख्यक समूह, तुत्सी के खिलाफ हत्या की होड़ में लग गए. क्यों? हुतस द्वारा नियंत्रित रवांडा सरकार ने अपने हुतु नागरिकों को हथियारों की सप्लाई की, और उन्हें सभी तुत्सीओं को देखते ही मारने का आदेश दिया. सरकार के नेताओं ने कहा कि तुत्सी लोग किसी तिलचट्टे से बेहतर नहीं थे और इसलिए वे मारने के योग्य थे. सरकार के नेताओं ने कहा, जो कोई हुतु इस आदेश का पालन नहीं करेगा वो खुद मारा जाएगा. फिर, सौ दिनों के लिए, आम लोग, जो पहले शांतिपूर्ण नागरिक थे, अब रातों-रात क्रूर हत्यारों में तब्दील हो गए. उन्होंने उन सभी तुत्सी - पुरुषों, महिलाओं, बच्चों का वध किया जो उन्हें मिले... ऐसा लग रहा था जैसे हुतुस लोगों ने अपना दिमाग और अपनी मानवता खो दी हो.

इस जाग्रत दुःस्वप्न के बीच में पॉल रुसेसाबागिना जो खुद एक हुतु थे उस बेहद अँधेरी दुनिया में, चमकने वाली रोशनी बनें. न केवल पॉल ने अपने साथी नागरिकों की हत्या करने से इंकार किया - उन्होंने अपने होटल को तुत्सी लोगों के लिए एक सुरक्षित आश्रय में बदल दिया. उन्होंने विभिन्न कमरों में तुत्सी लोगों छिपाया. दिन-ब-दिन, हुतुस लोगों ने बार-बार पॉल को जान से मारने की धमकी दी और उन सभी लोगों को भी जिन्हे उन्होंने छिपाया था.

लेकिन हर बार गुस्से में जब हुतुस लोग होटल में आए, तो पॉल ने अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करके उन्हें चकमा दिया और अक्सर उन्हें शांत करने के लिए मुफ्त में शराब पिलाई ताकि वे किसी को मारें नहीं. पॉल की रणनीति थी - उनसे बात करना, और उनका ध्यान भटकाते रहना. और उस रणनीति ने अच्छा काम किया! उससे होटल के अंदर छिपा एक भी व्यक्ति मारा नहीं गया.

बिना किसी हथियार के, सिर्फ अपने दिमाग का इस्तेमाल करके, इस विनम्र होटल प्रबंधक ने अन्य लोगों की रक्षा के लिए अपनी जान जोखिम में डाल दी. नतीजा: उन्होंने 1,268 लोगों की जान बचाई. इन बचे लोगों को ज़िंदा रहने के लिए सुरक्षित रूप से रवांडा से बाहर ले जाया गया. नरसंहार के बाद के वर्षों में, पॉल की वीरता पर आधारित "होटल रवांडा" नामक एक फिल्म बनी. पॉल अब बेल्जियम में रहते हैं, जहां वो होटल रवांडा रुसेबागिना फाउंडेशन चलाते हैं, जो रवांडा और अन्य अफ्रीकी देशों में राजनीतिक समस्याओं वाले बच्चों और महिलाओं को धन मुहैय्या कराती है. अपनी वीरता के बारे में, उन्होंने कहा, "मनुष्य होना हर व्यक्ति का एक मिशन होना चाहिए. मैंने जो किया है वो किसी को, और अन्य लोगों को भी करना चाहिए था, इसलिए मेरी वीरता में कोई विशेष सबक नहीं है." बड़ी बुराई के सामने भी पॉल रुसेबागिना ने घुटने नहीं टेके और वो करने का साहस जो किसी भी सभ्य इंसान को करना चाहिए था. और यह उस प्रकार की वीरता है जिसके हम सभी काबिल हैं.

आंग सैन सू ची

(1945-)

आंग सान सान ची दक्षिण पूर्व एशियाई देश बर्मा में मानवाधिकार नेता हैं. बर्मा एक ऐसा देश है जहां मूल रूप से कोई मानवाधिकार नहीं हैं. "मानवाधिकार" क्या होते हैं?
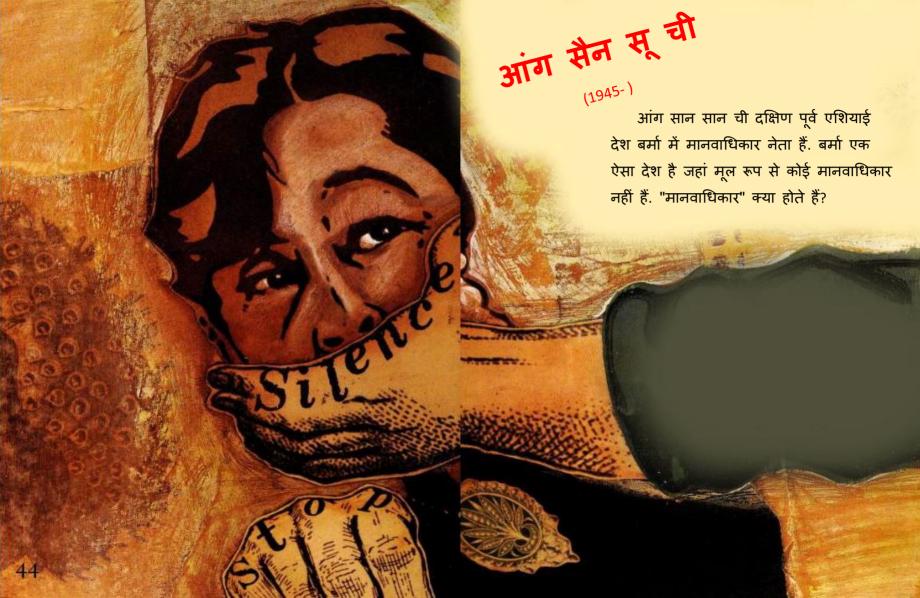
कुछ ऐसे मानवाधिकार जो बर्मा में मौजूद नहीं हैं: 1) सरकार के खिलाफ बोलने का अधिकार, 2) अपना पेशा चुनने का अधिकार, 3) पुलिस द्वारा गिरफ्तार किए जाने पर निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार, और 4) पुलिस द्वारा एक इंसान की तरह व्यवहार करने का अधिकार.

कोई भी बर्मा का निवासी, जो इन अधिकारों की मांग करता है उसे या तो पुलिस गोली मार देती है या फिर उसे जेल में डाल देती है. इनमें से अधिकतर गिरफ्तारियों और हत्याओं पर पर्दा डाल दिया जाता है, और उन्हें भुलाकर दफन कर दिया जाता है.

हालाँकि, जब 1989 में आंग सान सू ची को, उनकी सरकार के खिलाफ बोलने के लिए गिरफ्तार किया गया, तो पूरी दुनिया उन्हें देख रही थी. वो पहले से ही काफी प्रसिद्ध थीं. उनके पिता सेना के एक महत्वपूर्ण जनरल थे - आधुनिक बर्मा के जॉर्ज वाशिंगटन. उन्होंने अपने देश को इंग्लैंड से आजादी दिलाने में मदद की और इस प्रक्रिया में वे आधुनिक बर्मा के पहले राजनैतिक नेता बने. अफसोस की बात थी कि आधिकारिक तौर पर आजादी मिलने से पहले ही, उनकी हत्या कर दी गई थी. तब सू ची केवल दो बरस की थीं. वो नहीं जानती थीं कि वो भी बड़ी होकर एक नेता बनेंगी, और उन्हीं पुलिसवालों ओर सेना से लड़ेंगी जिन्होंने उनके पिता को मार डाला था. हालांकि उसके विपरीत, गांधी की तरह, सू ची ने भी लड़ाई के लिए शांतिपूर्ण साधनों का इस्तेमाल किया. गांधी की तरह, उनकी शिक्षा भी इंग्लैंड में हुई. गांधी की तरह ही वो भी एक बुद्धिमान और प्रतिभाशाली वक्ता बनीं. गांधी की तरह ही, उनकी सरकार को उनसे नफरत थी.

1989 में, वो मानवाधिकारों पर एक सार्वजनिक भाषण दे रही थीं, तभी अचानक सेना ने आकर उन पर अपनी बंदूकें तान दीं. उन्हें गोली मारने के आदेश थे. सू ची ने अपनी बात रखी और बोलना जारी रखा. अंतिम समय में कमांडिंग ऑफिसर ने हत्या रोक दी. बहरहाल, कुछ महीने बाद उन्हें छह साल के लिए "हाउस अरेस्ट" (अपने ही घर में जेल) में डाल दिया गया.

अपने कारावास के दौरान, सू ची बर्मा की प्रधान मंत्री चुनी गईं! लेकिन देश को चलाने वाले सैन्य तानाशाहों ने इस बात की कोई परवाह नहीं की कि लोगों ने किसे चुना था. सैन्य तानाशाह ही सत्ता में बने रहे और सू ची नजरबंद रहीं. अपने कारावास के दौरान, उन्होंने नोबेल शांति पुरस्कार भी जीता, जिसे स्वीकार करने के लिए वो अपना देश नहीं छोड़ पायीं.

सू ची के 1995 में रिहा होने के बाद से उन्हें बार-बार गिरफ्तार किया गया. और जब भी वो मुक्त होती हैं, तो पुलिस उन्हें सार्वजनिक रूप से बोलने से रोकने का हर संभव प्रयास करती, क्योंकि उन्हें पता है कि वो सरकार के खिलाफ बोलेंगी. कई बार, सैन्य तानाशाह, सू ची के घर के आस-पास की सड़कों को कारों से भर देते हैं, जिससे सू ची बाहर नहीं जा पाएं. उन्होंने कई दिनों तक बिना भोजन या पानी के सू ची को कार में फंसा कर रखा. फिर भी सू ची बोलती रहती हैं और किताबें भी लिखती रहती हैं, ताकि पूरी दुनिया को, बर्मा में हो रहे अन्याय के बारे में पता चल सके. बर्मा को हमेशा के लिए छोड़ने के बजाय (ऐसा विकल्प उन्हें बार-बार पेश किया गया), सू ची ने 2003 से, बर्मा में नजरबंद रहना ही चुना है - सैन्य सरकार के अन्याय पर ध्यान देने के एक तरीके के रूप में. आंग सान सू ची अपने देश को एक निष्पक्ष और शांतिपूर्ण जगह बनाने की हर संभव कोशिश कर रही हैं.

मीना केशवर कमली

(1936-1987)
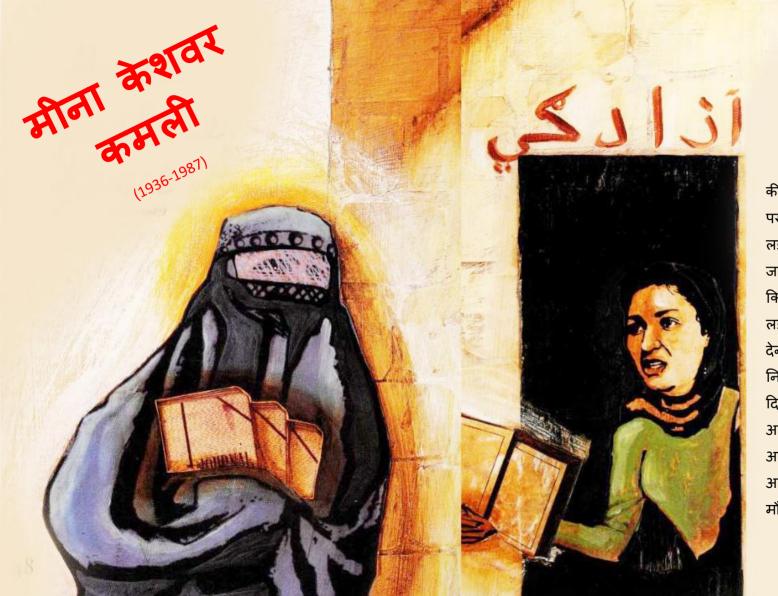
एक ऐसी दुनिया की कल्पना करें जहां पर महिलाओं और लड़कियों को स्कूल जाने से हतोत्साहित किया जाता हो - और लड़कियों को प्रवेश देने वाले स्कूलों को नियमित रूप से जला दिया जाता हो. आधुनिक अफगानिस्तान में, आज ऐसी ही दुनिया मौजूद है.

इस देश में मूल रूप से महिलाओं और लड़कियों के कोई मानवाधिकार नहीं है. स्कूल जाने से हतोत्साहित होने के अलावा, महिलाओं को अपने घरों के बाहर नौकरी करने से भी रोका जाता है. अफगानिस्तान में, महिलाओं वाले सभी घरों की खिड़कियां आमतौर पर काले रंग से रंगी होती हैं ताकि कोई अंदर न झांक सके. जब महिलाएं अपने घरों से बाहर निकलती हैं, तो उन्हें सिर से पैर तक एक काले या नीले कपड़े के "बुर्के" से खुद को ढंकना पड़ता है. उसमें सर का हुड भी शामिल होता है जो पूरी तरह से शरीर को ढकता है. हुड में बस सांस लेने और देखने के लिए कुछ छोटे छेद होते हैं. अगर कोई महिला बीमार हो, तो वो पुरुष डॉक्टर के पास नहीं जा सकती है. और चूंकि अफगानिस्तान में लगभग सभी डॉक्टर पुरुष हैं, इसका मतलब होता है कि महिलाएं आमतौर पर बीमार होने पर किसी डॉक्टर के पास नहीं जा सकती हैं.

इसके अतिरिक्त, अफगानी महिलाओं को आवाज़ करने वाले जूते या चमकीले रंग के जूते पहनने पर भी मनाही है. उन्हें किसी भी संगीत को सुनने से या उसे गाने से रोक जाता है. उन्हें टेलीविजन देखने या फिल्में देखने जाने से भी मना किया जाता है. उन्हें अपने नाखूनों को पेंट करने से भी रोका जाता है. उन्हें हंसने से भी मना किया जाता है. जो महिलायें ऐसा करती हैं उन्हें अक्सर पीटा जाता है, अपंग बनाया जाता है और फिर उनकी हत्या कर दी जाती है.

1990 के दशक से स्थिति बहुत खराब है जबसे "तालिबान" नामक कुछ हिंसक इस्लामी लोगों ने, सरकार की कमान संभाली है और उपरोक्त चीजों को गैरकानूनी घोषित कर दिया है. हालांकि तालिबान अब आधिकारिक तौर पर इंचार्ज नहीं हैं, और उनके कई अपमानजनक कानूनों को समाप्त कर दिया गया है, लेकिन वर्तमान सरकार ने महिलाओं और लड़कियों की सुरक्षा को सुधारने के लिए बहुत कम ही किया है.

हालाँकि अब आधिकारिक तौर पर लड़कियों को स्कूल जाने की अनुमति है, लेकिन तालिबान (जिसके पास अभी भी बहुत अधिक शक्ति है) लड़कियों के कई स्कूलों को नियमित रूप से अभी भी जला रहे हैं. कई शिक्षक, छात्र और माता-पिता तालिबान से इतने डरे हुए हैं कि वे इन स्कूलों को जलाए जाने का जोखिम उठाने की बजाय उन्हें पहले से ही बंद कर देते हैं.

1970 के दशक में, अफगानी महिलाओं को स्कूल जाने की अनुमति थी, और उन्हें सिर से पैर तक खुद को ढंकना भी नहीं पड़ता था. हालाँकि, उन्हें पुरुषों के समान अधिकार हासिल नहीं थे. इससे मीना केशवर कमल नाम की एक अफगानी महिला बहुत परेशान हुई. इसलिए, 1977 में, बीस साल की उम्र में, मीना ने अफगानिस्तान और पड़ोसी इस्लामिक देश पाकिस्तान में, महिलाओं की मदद के लिए एक संगठन शुरू किया. उन्होंने जिस संगठन की शुरुआत की उसे RAWA (रावा) या रेवोलुशनरी एसोसिएशन ऑफ़ द वीमेन ऑफ़ अफगानिस्तान, कहा जाता है. इसका उद्देश्य लड़कियों और महिलाओं को अच्छी शिक्षा और स्वास्थ्य की देखभाल प्रदान करना है. मीना को पता था कि अफ़ग़ानिस्तान जैसे देश में, महिलाओं की मदद करने का साहस करके वो अपनी जान को जोखिम में डाल रही थीं और अंतत: उन्हें इस काम के लिए अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी.

लेकिन 1987 में मीना की मौत के बाद भी RAWA (रावा) जिंदा है. आज भी RAWA (रावा) अफगानी और पाकिस्तानी महिलाओं और लड़कियों की शिक्षा और स्वास्थ्य की देखभाल प्रदान करता है - हालांकि वो सबकुछ गुप्त रूप से होता है. अफगानिस्तान में, अब दर्जनों गुप्त स्कूल और अनाथालय हैं, जो सभी लड़कियों के लिए हैं, जो RAWA सदस्यों के घरों में चलाए जाते हैं. ये शिक्षक, डॉक्टर और नर्स अपनी जान जोखिम में डालकर अफगानी महिलाओं और लड़कियों के बेहतर भविष्य के निर्माण के काम में लगे हैं.

मार्ला रुज़िका

(1977-2005)

अमेरिकी नेतृत्व वाले आक्रमण के बाद से आधुनिक इराक एक युद्ध क्षेत्र रहा है. अपने पड़ोसी कुवैत पर इराक के आक्रमण के जवाब में, 1991 में, अमेरिका ने इराक पर आक्रमण किया.

2003 में, इराक के तानाशाह सद्दाम हुसैन को सत्ता से हटाने के लिए अमेरिका ने इराक पर एक और सैन्य आक्रमण का नेतृत्व किया. सद्दाम हुसैन के आधीन इराकी लोगों को बहुत कम स्वतंत्रता हासिल थी. लोग, सद्दाम हुसैन के खिलाफ अपना मुंह तक नहीं खोल सकते थे. जो ऐसा करते उन्हें कैद में डाल दिया जाता या मार डाला जाता था. इराक में कुछ जातीय समूहों, जैसे कुर्दों को, हुसैन की सेना द्वारा नियमित रूप से मार डाला जाता था. बहुत कम लोग ही इस बात से असहमत होंगे कि सद्दाम हुसैन एक भयानक नेता थे. हालाँकि, कई लोग इस बात से असहमत हैं कि अमेरिका को सद्दाम हुसैन को सत्ता से हटाने के लिए इराक पर आक्रमण करना चाहिए था या नहीं. उसके लिए अमेरिका को अन्य देशों से बहुत कम समर्थन मिला था. ज्यादातर लोग सोचते हैं कि अमेरिका ने, इराक में अच्छा करने से ज्यादा नुकसान पहुंचाया. हालांकि, अभी भी कई अमेरिकी ऐसा मानते हैं कि अमेरिकी सेना ने इराकी लोगों की मदद की थी. उनका मानना है कि इराकी आजादी के लिए अमेरिकी सैनिकों ने अपनी जान जोखिम में डाली और अपनी जानें कुर्बान कीं.

एक बात निश्चित है: किसी भी युद्ध में, निर्दोष लोगों को मुश्किलें ज़रूर झेलनी पड़ती हैं - ऐसे साधारण लोग जो अपने दैनिक जीवन के बारे में सोचते हैं. यहां तक कि सेना के जनरलों का भी कहना है कि युद्ध में आम लोग भी ज़ख़्मी होते हैं. इराक में सैकड़ों हजारों निर्दोष लोग घायल हुए और मारे गए. और कुछ ऐसे अमेरिकी भी हैं जिन्होंने इन निर्दोष पीड़ितों की मदद करने के लिए अपना जीवन समर्पित किया है. ऐसी ही एक अमेरिकी थीं - मारिया रुज़िका.

2001 में, मारिया रुज़िका एक चौबीस वर्षीय, सुनहरे बालों वाली कैलिफ़ोर्निया में रहने वाली महिला थी, जो युद्ध के कारण हुई पीड़ा से बहुत परेशान थी.

उसने अपनी भावनाओं को क्रिया में बदलने का फैसला किया. फिर वो युद्ध के निर्दोष पीड़ितों की मदद करने के लिए अफगानिस्तान गईं. 2003 में, वो अपने प्रयासों को, उससे भी खतरनाक युद्ध क्षेत्र इराक में ले गईं. बिना बंदूक लिए, कैलिफोर्निया की मुस्कान के साथ, मारिया इराक में घर-घर गयीं, यह देखने के लिए कि युद्ध से कौन आहत हुआ था. एक इराकी अनुवादक की मदद से उन्होंने लोगों से बातें कीं, उनकी कहानियाँ सुनीं और यह पता लगाया कि कौन मारा गया, घायल हुआ, या खो गया था. और उन्होंने ऐसा तब किया, जब उनके ऊपर से गोलियां निकल रही थीं ....

जैसे ही उन्होंने यह जानकारी एकत्र की, उन्होंने अमरीकी सरकार में लोगों को इसकी सूचना दी. सीनेटर पैट्रिक लेही की मदद से, वो इन निर्दोष इराकी पीड़ितों और उनके परिवारों के लिए दो करोड़ डॉलर की सहायता प्राप्त करने में सक्षम रहीं. अमेरिकी सेना के साथ काम करते हुए, उन्होंने सुनिश्चित किया कि वो पैसा सही लोगों में वितरित हो. पत्रकारों के साथ काम करते हुए, उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि उन इराकी लोगों की कहानियाँ, कहीं खो न जाएँ.

मारिया रुज़िका इराक में होने के जोखिमों को वैसे ही जानती थीं जैसे कोई सैनिक युद्ध के जोखिमों को जानता है. उनका जीवन, बहुत संक्षिप्त था और निस्वार्थता का एक स्मारक था.

विलियम फीहान

(1929-2001)

अग्निशमन विभाग -

विलियम (बिल) फीहान हमेशा से फायरमैन बनना चाहते थे. उनके पिता भी एक फायरमैन थे, और बिल जानते थे कि उनके लिए भी वही जीवन ठीक होगा.

September 11, 2001

इसलिए, 1959 में, बिल सबसे बड़े अमेरिकी शहर न्यूयॉर्क शहर के, सबसे बड़े अमेरिकी अग्निशमन विभाग में शामिल हो गए. और वो तुरंत अपने काम से प्यार करने लगे - उन्हें आग बुझाना पसंद था!

उन्हें जलती इमारतों में भागना और लोगों को बचाना पसंद था. बिल को नहीं पता था कि वो इस काम को क्यों पसंद करते थे. बस उनको उसमें मज़ा आता था. अग्निशमन उन बहादुर लोगों के लिए एक नौकरी होती है जो खतरों से नहीं डरते हैं और जो दूसरों को बचाने के लिए अपनी जान जोखिम में डालते हैं. और बिल फीहान ने एक फायरमैन के रूप में इतनी बहादुरी दिखाई कि उन्हें बार-बार पदोन्नति मिली - न्यूयॉर्क शहर के अग्निशमन विभाग के उच्चतम पद तक.

फीहान को अग्निशमन विभाग के लिए काम करना इतना पसंद था कि जब वो पैंसठ वर्ष की आयु में सेवानिवृत्ति तक पहुँचे, तब उन्होंने सेवानिवृत्त होने से इंकार कर दिया. मैं रिटायर क्यों होऊं? उन्होंने सोचा. मैं रिटायर होने के बाद फिर क्या करूंगा? इसलिए फीहान रुके रहे और काम करते रहे. पर अब सत्तर साल की उम्र में वो अब आग नहीं बुझा रहे थे. उसकी बजाय, अब डिप्टी कमिश्नर होने की हैसियत से वो एक डेस्क-जॉब कर रहे थे. अगर कोई भीषण आग लगती, तो उनका काम दूसरे दमकलकर्मियों को यह बताना होता कि उससे कैसे निपटा जाए. लेकिन वो हमेशा अपना फायर-कोट और हेलमेट अपनी कार की डिक्की में रखते थे. शायद कोई मौका आता तब वो एक बार फिर से हरकत में आ सकते थे.

फीहान को इस बात का पता नहीं था कि 11 सितंबर 2001 की सुबह जब वो उठे तो वो दिन आ गया था...

सुबह 9:00 बजे से ठीक पहले यह सुनने के बाद कि एक हवाई जहाज एक इमारत से टकरा गया था, फीहान के सहायक ने उन्हें खिड़की पर बुलाया, जहाँ उन्होंने कुछ भयानक देखा: वर्ल्ड ट्रेड सेंटर के जुड़वां टावरों में से एक में, काला धुआँ निकल रहा था. वे दोनों न्यूयॉर्क शहर में सबसे ऊंची गगनचुंबी इमारतें थीं. फिर फीहान ने वही किया जो कोई भी सच्चा-नीला फायरमैन करता: वो अग्नि-स्थल की ओर दौड़े. जब तक इकहत्तर वर्षीय डिप्टी कमिश्नर वहां पहुंचे, अपना हेलमेट और फायर-कोट पकड़े, तब तक दूसरा विमान वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की दूसरी टावर से टकरा चुका था. यह कोई दुर्घटना नहीं थी, बल्कि हिंसा का एक जानबूझकर किया गया कार्य था. वो एक आतंकवादी संगठन का कार्य था! जब हर कोई अपनी जान बचाकर भाग रहा था, जलती इमारतों से बचने के लिए हाथ-पांव मार रहा था, फीहान और अन्य सभी दमकलकर्मी आग में फंसे लोगों को बचाने के लिए अंदर जाने की कोशिश कर रहे थे. जब वे यह कर रहे थे, तब कुछ बहुत बुरा हुआ : पहले एक मीनार ढह गई और फिर दूसरी. उसने कई लोगों को मार डाला, जिनमें से कई फायरमैन शामिल थे, जिनमें ... बिल फीहान भी शामिल थे.

बिल फीहान जैसे फायरमैन आग बुझाते हैं. आपातकालीन कर्मचारियों की तरह वो लोगों की जान बचाते थें. वे अपनी जान जोखिम में डालते हैं. यही उनका काम है. और वे इस काम से कभी भी प्रसिद्ध होने की कोई उम्मीद नहीं रखते हैं. इस कारण से, वे शायद सभी शांतिपूर्ण नायकों में सबसे निस्वार्थ हैं. उनके बिना भला हम क्या करेंगे?